पुस्तकालय : नज़रिया और कौशल दोनों ही अहम हैं
समुचित प्रशिक्षण ही एकमात्र रास्ता

अनिल सिंह

नीति दस्तावेज़ों में स्कूल के दायरों में पुस्तकालय की अहमियत को स्वीकारते हुए कई महत्त्वपूर्ण प्रावधान किए गए हैं। फिर भी कई कोशिशों के बावजूद पुस्तकालयों की स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। लेख स्कूल में पुस्तकालय के महत्त्व और आवश्यकता को दर्शाता है, और कहता है कि किसी भी पुस्तकालय के बेहतर संचालन के लिए अच्छी किताबों का संकलन तो होना ही चाहिए, साथ ही पुस्तकालय को जीवन्त व सक्रिय बनाने और बच्चों को किताबों से जोड़ने के लिए पुस्तकालय प्रभारियों को पुस्तकालय के विभिन्न अवयवों के बारे में प्रशिक्षित करना भी ज़रूरी है। पुस्तकालय प्रभारियों के लिए बनाए गए एक ऐसे ही प्रशिक्षण कोर्स व उसके क्रियान्वयन का विवरण यहाँ प्रस्तुत है। बच्चों के साथ किताब पर काम कैसे करें, इसकी एक बानगी भी आप लेख में पाएँगे। -सं.

पृष्ठभूमि

स्कूल पुस्तकालय की बात मुदलियार आयोग 1952 की रिपोर्ट में की गई सिफ़ारिशों से लेकर *नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में किए गए प्रावधानों तक कही जा रही है। *1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति* पुस्तकालय के संग्रह के विकास और पुस्तकालय तक सभी की पहुँच की बात करती है। वहीं 1996 की आचार्य राममूर्ति कमेटी की सिफ़ारिशों के अनुसार पाठ्यपुस्तकों पर निर्भरता कम करते हुए पुस्तकालय द्वारा शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने की बात देखने को मिलती है। *2005 की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा* पुस्तकालय को स्कूल का एक घटक मानते हुए नवीनीकरण की बात कहती है, और पुस्तकालय कालांश के लिए समय निकालने और पुस्तकें घर ले जाने की महत्त्वपूर्ण सिफ़ारिश करती है। *2009 का शिक्षा का अधिकार क़ानून* पुस्तकालय में समाचार पत्र-पत्रिकाओं सहित विविध पुस्तकों व कथा साहित्य को प्रोत्साहित करने की बात करता है। 2018 में समग्र शिक्षा अभियान में पुस्तकालय में संग्रह विकसित करने के लिए 5000 से 20000 रुपए तक की राशि का प्रावधान किया गया। अब *2020 की नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति* बच्चों में पढ़ने व संवाद की संस्कृति को बढ़ावा देने की बात करती है। इसमें पुस्तकालयों के भीतर क्षेत्रीय भाषाओं के बाल साहित्य की ज़रूरत पर ज़ोर दिया गया है। पुस्तकालय में पुस्तकों के इर्द गिर्द गतिविधियों की बात भी पहली बार इसी में कही गई है।

पुस्तकालयों का मौजूदा हाल

शिक्षा के व्यापक दायरे में पुस्तकालय की ज़रूरत और उसके महत्त्व को नज़रन्दाज़ नहीं किया जा सका है। लेकिन प्रश्न फिर भी वही है कि स्कूल समय सारणी में पुस्तकालय कालांश का प्रावधान, पुस्तक संग्रह के लिए धनराशि और पुस्तकालय प्रभारी की पदस्थापना के बावजूद हम पहुँचे कहाँ हैं?

पुस्तकालय कालांश का प्रावधान हो जाने के बाद भी कई बार शाला प्रधान का कहना

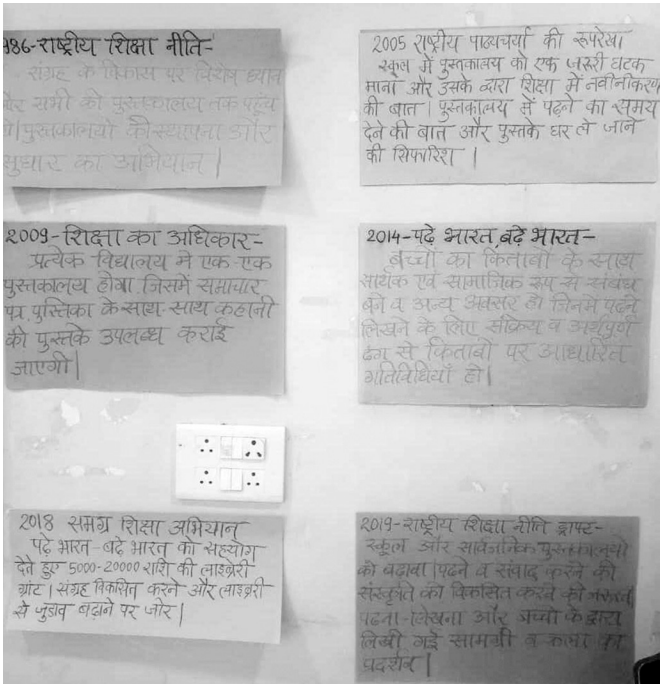

होता है कि जब कक्षाओं में विषय शिक्षण के साथ ही यह सब हो रहा है, फिर अलग से पुस्तकालय कालांश की ज़रूरत ही क्या है। या, ज़्यादातर कक्षा 1 और 2 के बच्चों के लिए इसे यह सोचकर उपयुक्त नहीं माना जाता है कि जब इन्हें पढ़ना-लिखना अभी आया ही नहीं है, फिर इन बच्चों के लिए पुस्तकालय में क्या होगा। विषय शिक्षण और बुनियादी पढ़ना-लिखना सिखाने पर पूरा ज़ोर होने के कारण पुस्तकालय कालांश को समय की बर्बादी समझा जाता है। पुस्तकालय प्रभारी होने के बावजूद भी पुस्तकालय की गतिविधियाँ नहीं हो पातीं, क्योंकि नि:शुल्क पाठ्यपुस्तकों के रख-रखाव, उनके वितरण, आदि में ही उसकी व्यस्तता रहती है। एक तरह से नि:शुल्क पाठ्यपुस्तकों से जुड़े काम करना ही पुस्तकालय प्रभारी का काम मान लिया गया है। समग्र शिक्षा अभियान या अन्य कार्यक्रमों के तहत आई पुस्तकें अलमारी में ही रखी रह जाती हैं, क्योंकि इनके इस्तेमाल को लेकर न तो कोई प्रशिक्षण है, न ही स्पष्ट दिशा-निर्देश। पुस्तकों की ख़रीद के लिए अगर राशि होती भी है, तब कहाँ से अच्छी पुस्तकें मिलेंगी, कौन चयन करेगा, आदि पर कोई स्पष्ट जानकारी नहीं होने से भी इसका समुचित इस्तेमाल नहीं हो पाता।

इसके अलावा, आज भी स्कूलों में पाठ्यपुस्तकों से इतर किताबों को लेकर खुलापन और स्वीकार्यता नहीं है। पुस्तकालय सभी के लिए पहुँच में नहीं हैं। पुस्तकालयों को उच्च कक्षाओं के लिए सन्दर्भ कोश की तरह देखने का साधनवादी नज़रिया बना हुआ है। प्राथमिक स्तर के बच्चों, जिनके लिए पुस्तकालय सबसे ज़रूरी और अहम है, को पुस्तकालय से दूर रखा जाता है। संग्रह न तो अद्यतन है, न उसमें विविधता और ताज़गी है। पुस्तकालय प्रभारी का कोई समुचित प्रशिक्षण नहीं है कि पुस्तकालय का सार्थक और जीवन्त इस्तेमाल कर सकने का उसमें नज़रिया और कौशल विकसित हो सके। ऐसे में, पुस्तकालय अपना अर्थ और वजूद ही खो देते हैं। शिक्षाविद् प्रोफ़ेसर कृष्ण कुमार के शब्दों में कहें तो, पुस्तकालयों का यह हाल देखकर लगता है समाज को इसकी ज़रूरत ही नहीं है।

पुस्तकालयों की सम्भावनाएँ

प्राचीन काल से पुस्तकालय हमारी संस्कृति का हिस्सा रहे हैं। समाज से ही वो स्कूल में आए हैं। पुस्तकों में कई-कई जीवन को समझने की खिड़की खुलती है। पुस्तकालय का बेहतर इस्तेमाल दरअसल पुस्तकों के पढ़े-पढ़ाए जाने और उनपर रचनात्मक संवाद के ज़रिए ही हो सकता है।

पुस्तकों पर रचनात्मक संवाद दरअसल कहानी या कविताओं की परतों को खोलता है। इस तरह के संवादों के दौरान बच्चे अपनी कल्पनाओं, अनुमान, जीवन अनुभव और तर्क-विश्लेषण जैसे कौशलों का इस्तेमाल कर पाने

का मौक़ा पाते हैं। बच्चों को इस संवाद से जो रस मिलता है वह उन्हें साहित्य का आस्वादन करना सिखाता है, और इस तरह वे पाठक बनने की दिशा में आगे बढ़ते हैं।

पुस्तकालय में पुस्तक चर्चा, रीड अलाउड, साझा पठन, जोड़ी पठन, पाठक रंगमंच, रोल प्ले, कहानी पर प्रश्न और चर्चा, संग्रह पर आधारित क्विज़ और पहेलियाँ, पुस्तक ख़ज़ाने की खोज, डिस्प्ले, किताबों से जुड़े चित्रांकन और लेखन की ऐसी अनेक गतिविधियाँ हैं जो दरअसल पुस्तकालय को जीवन्त बनाती हैं। शिक्षा के ज़रिए जिन व्यापक लक्ष्यों को हासिल करने की बात हम लगातार करते हैं उन तक पहुँचना भी पुस्तकालय के ज़रिए सुगम हो सकता है।

अलग-अलग गतिविधियों के लिए उपयुक्त किताबों का चयन, उनको ख़ुद पढ़कर देखना-समझना, बच्चों के साथ संवाद, चर्चा के लिए उपयुक्त सवालों की बुनावट, जुड़ाव के लिए प्रारम्भिक चर्चा या गतिविधि डिज़ाइन करना, किताब के इस्तेमाल किए जाने की चरणबद्ध योजना, पूर्व तैयारी और सावधानियाँ, बच्चों के साथ किए गए अपने काम पर चिन्तन और स्वयं की दक्षता बढ़ाने के प्रयास, कुछ ऐसे कौशल और हुनर हैं जो विधिवत प्रशिक्षण से ही आ सकते हैं। किन्तु ग़ौरतलब है कि हमारे देश में इतने महत्त्वपूर्ण काम के लिए कोई समुचित प्रशिक्षण योजना या कार्यक्रम नहीं है। बाल साहित्य और बाल पुस्तकालय को लेकर चलने वाले सावधिक प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम या ट्रेनिंग मॉड्यूल न के बराबर या बहुत कम हैं। इससे भी आगे इसे भाषा शिक्षण के दायरे में ही देखने का सीमित दृष्टिकोण भी पुस्तकालय की असीम सम्भावनाओं को रोकता है।

लाइब्रेरी एजुकेटर्स का प्रशिक्षण

पुस्तकालय की सम्भावनाओं को उनके अधिकतम स्तर पर ले जाने, और किताबों का समुचित व सार्थक इस्तेमाल कर पाने के लिए एक नज़र और हुनर दोनों अहम हैं। ऐसे में टाटा ट्रस्ट के पराग इनिशिएटिव द्वारा चलाया जा रहा लाइब्रेरी एजुकेटर्स कोर्स (LEC) पुस्तकालय के सैद्धान्तिक और व्यवहारिक दोनों ही पहलुओं पर बराबर नज़रिया व समझ बनाने की कोशिश करता है। इसमें देशभर से हर साल अधिकतम 35 लोगों का नामांकन लिया जाता है। सात महीने का यह कोर्स 13 (5+5+3) दिन की सम्पर्क अवधि एवं शेष अन्तराल अवधि के मिश्रित ढाँचे में चलाया जाता है। कोर्स में पुस्तकालय की ज़रूरत और महत्त्व, पढ़ने की प्रक्रिया, बाल साहित्य, पुस्तकालय गतिविधियाँ, पुस्तकालय संचालन एवं आकलन आदि पर सत्र, परिचर्चाएँ, पठन सामग्री, अभ्यास, प्रोजेक्ट कार्य, पुस्तकालय भ्रमण एवं अवलोकन के माध्यम से समझ एवं दक्षता बनाने के प्रयास किए जाते हैं। प्रतिभागी ख़ुद भी नियमित पठन से जुड़ते हैं, और तब बच्चों को किताबों से जोड़ने का एक पूरा ख़ाका भी वे विकसित कर पाते हैं।

एक किताब सौ अफ़साने

इस तरह के प्रशिक्षण क्यों ज़रूरी हैं? इस बात को हम एक उदाहरण से समझने की कोशिश कर सकते हैं। एक पुस्तक हम चुनते हैं– *पायल खो गई।* एकलव्य और मुस्कान के संयुक्त प्रकाशन से आई यह किताब शहरी वंचित परिवारों के जीवन सन्दर्भों एवं उनमें बच्चों की स्थिति की एक झलक देती है। अव्वल तो, किसी को भी इस किताब को कई दफ़े पढ़ने की ज़रूरत है, ताकि वह टेक्स्ट और चित्रों की बारीक़ियों को, कथानक को समझ सके, और एक पाठक के रूप में उसका आस्वादन कर सके।

हम इस वास्तविकता से भली भाँति वाक़िफ़ हैं कि वयस्कों, शिक्षकों में पढ़ने, और वह भी बाल साहित्य, की प्रवृत्ति तो बिलकुल ही नहीं है। अगर एक बार यह आदत बन जाए, और साहित्य का चस्का लग जाए, फिर पुस्तकालय के जीवन्त होने की पहली सीढ़ी तो पार हुई समझिए। शिक्षक को लगा यह चस्का बच्चों में ट्रांसमिट होने में ज़्यादा वक़्त नहीं लेगा।

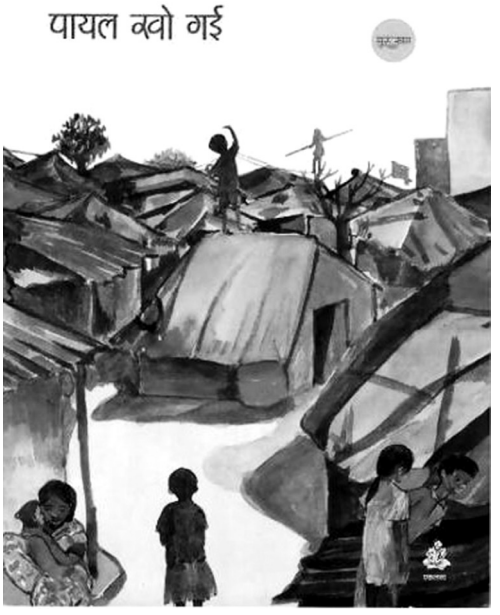

पायल खो गई के ज़रिए एक अनुभव

पायल खो गई पर काम शुरू होने से पहले उस किताब का परिचय देते हुए प्रतिभागियों के साथ शीर्षक पर थोड़ी बात की गई। यह शीर्षक कई तरह की सम्भावनाएँ समेटे हुए है। प्रतिभागी अनुमान लगाने लगे कि शीर्षक क्या कहता है, कहानी क्या हो सकती है, आदि। कवर पेज पर बने चित्र का अवलोकन कराया गया। उसकी बारीक़ियों पर नज़र डालते हुए प्रतिभागियों ने उससे कुछ अनुमान और निष्कर्ष निकाले।

प्रतिभागियों ने कहा कि कहानी में किसी की पायल खो गई होगी। कुछ ने कहा कि अब पायल पहनने का रिवाज ख़त्म-सा हो गया है, इसलिए पायल के खो जाने की बात कही गई होगी। कुछ ने पायल को नाम की तरह लिया, और कहा कि पायल नाम की कोई लड़की गुम हो गई होगी।

यह सब बच्चों को रचनात्मक बनाने, संवाद करने, और अपनी राय रख पाने का रास्ता बनाते हैं। पायल वस्तु भी है और एक नाम भी। इसके इर्द गिर्द कुछ चर्चाएँ हो सकती हैं। ये कहानी के प्रति उत्सुकता ही बढ़ाएँगी, और किताब से जुड़ाव बनाने में मददगार होंगी।

इसके बाद कहानी पढ़ना शुरू हुआ। कहानी में वाचन की शुद्धता, उतार-चढ़ाव, भावोत्पादकता, भाषा की बुनावट, विराम चिह्नों का अनुशासन बेहद महत्त्वपूर्ण है। यह बच्चों के लिए लिखित भाषा का संसार खोलता है, और भाषा को एक सन्दर्भ में वापरने की दृष्टि देता है।

इसी दौरान, किताब में कुछ पहले से चिह्नित जगहों पर रुक कर शिक्षक द्वारा बच्चों से छोटे-छोटे उत्प्रेरक सवाल किए जा सकते हैं। ये सवाल बच्चों को कहानी से जोड़ने, तत्परता दिखाने, और कहानी के साथ होने का अवसर देते हैं। छूट रहे बच्चों को भी इस ज़रिए वापस कहानी से जोड़ा जा सकता है। बच्चों में कहानी

के साथ-साथ चल सकने का कौतुक पनपता है। बीच में या बाद में पूछे जाने वाले सवालों की बुनावट क्या हो, यह पहले से तय होना बहुत ज़रूरी है।

प्रतिभागियों से पूछा गया, बच्चे क्या-क्या काम कर रहे हैं; कहाँ देखा है ऐसा दृश्य? इस तरह कुछ चित्रों पर रुक कर उनकी डिटेलिंग पर बच्चों की नज़र लाई जा सकती है। यह बच्चों में चित्रों को देखने की एक दृष्टि विकसित कर सकती है। कहानी में आए प्रसंगों या घटनाक्रम के आधार पर बच्चों को अपने अनुभव जोड़ने के मौक़े दिए जा सकते हैं। *पायल खो गई* में शहरी वंचित समुदाय के कामकाजी बच्चों के एक दिन का ब्योरा है, इसपर कक्षा में चर्चा की जा सकती है। इस सन्दर्भ में बच्चों से उनके अनुभव आमंत्रित किए जा सकते हैं।

प्रतिभागियों से कामकाजी बच्चों के शिक्षा के अधिकार पर बात की गई। बेहद मिली-जुली प्रतिक्रियाएँ ही आईं। एक समूह इस समुदाय पर ही आरोप मढ़ रहा था कि वो अपने बच्चों को पढ़ाना नहीं चाहता। वहीं, दूसरे समूह का कहना था कि इन बच्चों के लिए परिस्थितियाँ बेहद प्रतिकूल हैं, ऐसे में कुछ अतिरिक्त प्रयास करके ही इन्हें शिक्षा से जोड़े रखा जा सकता है। काम करना भी बहुत कुछ सिखाता है, ऐसे में इन बच्चों में जीवन कौशल और व्यवहारिक समझ बेहतर होती है। इससे प्रतिभागियों को कहानी और उसके पात्रों से सार्थक रूप से जुड़ने का मौक़ा मिला।

कहानी के बाद कहानी पर बच्चों की प्रतिक्रिया लेना उन्हें कहानी को संश्लेषित करने, अनुभवों से जोड़ने, पाठक प्रतिक्रिया देने और कथानक के सन्दर्भों को समझने में मदद करता है। अब यह सिर्फ़ कहानी न होकर एक वास्तविक जीवन सन्दर्भ बन जाता है, और बच्चे गम्भीर प्रतिक्रियाएँ, मिलते-जुलते उदाहरण देते हैं, अपने अनुभव सुनाते हैं, राय रखते हैं, सवाल करते हैं, और स्थितियों का विश्लेषण कर उनपर चिन्तन भी करते हैं।

कहानियों में पात्रों के साथ होना, उनसे जुड़ाव और तादात्म्य बनाना एक अच्छा पाठक बनने की दिशा में पहला क़दम है। एक प्रशिक्षित पुस्तकालय प्रभारी या शिक्षक यह सब कर पाने में सक्षम होता है। पायल खो गई कहानी में जो बचपन है, वह बचपन की रूढ़ छवियों को तोड़ता है, बच्चों में श्रम के प्रति सम्मान और कामकाजी बच्चों के प्रति सहज संवेदनशीलता जगाता है। यह शिक्षक का दायित्व है कि वह बच्चों को कहानी को अपनी तरह से देखने-समझने, स्वीकारने या नकारने, निष्कर्ष निकालने और राय बनाने की छूट दें। कोई शिक्षा, सीख, सबक या निष्कर्ष देने की जल्दबाज़ी न करें। यह नज़रिया बनना बहुत ज़रूरी है कि बच्चे इसी तरह एक अच्छे पाठक, चिन्तक, स्वतंत्र राय रखने और सोचने-समझने वाले व्यक्ति बनेंगे।

हमने प्रतिभागियों से कहा कि वो बाहर जाकर 10-10 चीज़ें उठाकर लाएँ। इस तरह वहाँ लगभग 50-60 तरह की चीज़ें इकट्ठी हो गईं। हमने कहा, अब इन चीज़ों को सामग्री, उपयोगिता व मूल्य के हिसाब से वर्गीकृत करें। प्रतिभागियों ने इसमें बहुत मज़े किए। दरअसल इस गतिविधि के पीछे इस बात का अनुभव

कराने का उद्देश्य था कि कचरा बीनने वाले बच्चों में यह ग़ज़ब का कौशल होता है। आर्थिक के साथ ही इसका एक वैज्ञानिक पक्ष भी है। विभिन्न धातुएँ, रिसाइकिल्ड और फ़र्स्ट क्वालिटी प्लास्टिक में फ़र्क़ करने के साथ सामान्य काग़ज़ और गत्ते को अलग-अलग रखना, उनके बाज़ार मूल्य का आकलन करना, इलेक्ट्रॉनिक सामान में से बहुमूल्य हिस्सा व धातुओं को पहचानना और उन्हें चुनकर निकालना कोई साधारण बात नहीं। प्रतिभागियों से इन मसलों पर भी चर्चा हुई।

अगर यह सब हुआ हो तो कहानी के बाद कहानी पर चर्चा के कई रास्ते खुलते हैं। कहानी के बाद उसपर कोई लेखन या चित्रांकन भी हो सकता है। बच्चों को इसकी छूट होनी चाहिए कि वो कहानी पर अपनी किस तरह की प्रतिक्रिया देना चाहते हैं, और किस माध्यम से।

पुस्तकालय कमाल की जगह है

किताबों से जुड़ाव बनाने के लिए पुस्तकालय कक्ष में कोई जादू करने की ज़रूरत नहीं पड़ती है। किताबों में ही कितना जादू भरा पड़ा है, बस उसे ही बाहर निकालना है। जैसा कि मैंने ऊपर सुझाया है, यह जादू बच्चों के समक्ष प्रस्तुत करने में कुछ गतिविधियाँ मददगार होती हैं। साथ ही, थीम- या विषय-आधारित पुस्तकों का डिस्प्ले लगाया जा सकता है। त्योहार व खान-पान की विविधता, मौसम, पक्षी, परिवार, महिला नायक, यात्रा कथाएँ, कविताएँ या विज्ञान पर कथेतर विधा में से कुछ थीम हो सकती हैं डिस्प्ले की, जो पढ़ने के लिए बच्चों को आमंत्रित करती हैं। इन्हें आकर्षक बनाने के लिए उपलब्ध संसाधनों से सजावट, विषय के इर्द गिर्द कुछ वास्तविक वस्तुएँ, निर्देश, चित्र पोस्टर, आदि लगाए जा सकते हैं।

यह सब क्यों ज़रूरी है; जीवन्तता क्या है; बच्चों को किताबों से जोड़ने, उन्हें पाठक बनाने को उत्प्रेरित करने के लिए क्या किया जाए; कैसे किया जाए; शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों को हासिल करने में पुस्तकालय किस तरह सहायक है; और कैसे यह स्कूल का अभिन्न हिस्सा है? यह दृष्टिकोण समुचित प्रशिक्षण से ही आ सकता है। अच्छे पुस्तकालय प्रभारी की तो बात होती है, लेकिन उनकी तैयारी की नहीं। सरकारी, ग़ैर-सरकारी शिक्षक या पुस्तकालय प्रभारी, शिक्षकीय पेशे को अपना कैरियर देखने वाले युवक-युवतियाँ, पुस्तकालय को बाल विकास के लिए उपयोग में लेने वाले सामाजिक कार्यकर्ता, सामुदायिक पुस्तकालय पहल चलाने वाले, आदि सभी व्यक्तियों के लिए यह तैयारी बेहद अहम है। पुस्तकालय के ज़रिए पढ़ने की संस्कृति बनाने के लिए ख़ुद का एक सचेत पाठक होना बहुत ज़रूरी है। इस तरह का प्रशिक्षण पाठक बनने की राह भी सुगम करता है।

अनिल सिंह पिछले 20 बरसों से भी अधिक समय से सामाजिक क्षेत्र में सक्रिय हैं। गए 15 सालों से प्राथमिक शिक्षा ही उनका प्रमुख कार्यक्षेत्र है। सात सालों तक भोपाल में वैकल्पिक स्कूल के मॉडेल आनन्द निकेतन से जुड़े रहे और वहाँ भाषा व सामाजिक विज्ञान शिक्षण का काम किया। वर्तमान में पराग के लाइब्रेरी एजुकेटर कोर्स में बतौर फ़ैकल्टी जुड़े हुए हैं।

सम्पर्क : bihuanandanil@gmail.com